Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 SHISRRJ | Volume 1 | Issue 4 | ISSN : 2581- 6306

महाकाव्यों में नारी उत्पीडन

डॉ० उमा शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, नानक चन्द ऐंग्लो संस्कृत कॉलेज़, मेरठ,उत्तर प्रदेश।

सारांश – नृ+अञ् ङीन् के योग से निष्पन्न नारी शब्द के अमरकोष में एक श्लोक के माध्यम से निम्नवत् पर्यायवाची उपलब्ध होते हैं यथा –

स्त्री योषिदबला योषा नारी सीमन्तिनी वधूः
प्रतीपदर्शिनी वामा वनिता महिला तथा।।

लोक में धन शक्ति विद्या की अधिष्ठात्री देवता के रूप में जिस प्रकार लक्ष्मी दुर्गा सरस्वती आदि प्रसिद्ध हैं उसी प्रकार वैदिक देवता भी विविध शक्तियों की अधिष्ठात्री हैं मारकण्डेय पुराण के अनुसार असुरों के संहारार्थ देवताओं की शक्ति का समुच्चय देहधारिणी देवी के रूप में ही प्रकट होता है किंतु साथ ही यह भी ध्यातव्य है कि रामायण और महाभारत जैसे प्रमुख इतिहास महाकाव्यों में जो महायुद्ध हुए हैं वे नारी के अपमान रूपी उत्पीडन के कारण ही हुए हैं। इनके उत्तरवर्ती ग्रंथ जिनके ये प्रेरणा स्रोत रहे हैं, उनमें भी स्त्री उत्पीडन के यत्र –तत्र उदाहरण दृष्टिगत होते हैं आज भी विश्ववरेण्या भारतीय संस्कृति के विटप को पुष्पित और पल्लवित रखने के लिए नारी सम्मान अपेक्षित है जिससे नारी की स्थिति दृढप्रतिष्ठित हो सके।

मुख्य शब्द – यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, समुच्चय, उत्पीडन, आचरण ,भयत्रस्ता ,लब्धख्याति, प्रचंडदर्शना, अंगुलिगण्य, उपनिषद्।

नारी शब्द नृ + अञ् + ङीन् के योग से बना है। नारी शब्द की निष्पत्ति "नुर्नरस्य वा धर्म्या अथवा नरस्य धर्माचारोऽस्याम् अर्थात् नरधर्माचारयुक्ता अथवा 'मातृरक्तोत्तरा नारी' कहकर की गई है[i] अर्थात् सृष्टि–सर्जन हेतु मातृत्व का श्रेष्ठ रक्त उसी में प्रवाहित होता है। अमरकोष में एक श्लोक के माध्यम से नारी शब्द के पयार्यवाची निम्नवत् उल्लिखित हैं–

स्त्री योषिदबला योषा नारी सीमन्तिनी वधूः।
प्रतीपदर्शिनी वामा वनिता महिला तथा।।[pp]

अनन्त धैर्य एवं सहनशीलता की प्रतिमूर्ति स्त्री का गुणगान पुरुष द्वारा अनादिकाल से किया जाता रहा है। पुरुष सहचरी स्त्री के बिना अपूर्ण है।

संहिताकाल में धार्मिक कृत्यों में नारी का विशिष्ट स्थान रहा है। रुद्र–याग तथा सीता–याग सदृश अनेक यागों का सम्पादन स्त्रियों का विशिष्ट अधिकार था। संहिताकाल में यदि नारियों के यज्ञ–सम्पादन पर नियन्त्रण मिलता भी है तो वह केवल अशिक्षित स्त्रियों के लिए ही था। शिक्षित स्त्रियाँ तो उन यागों को विधिवत् सम्पादित करती थीं। लोक में धन, शक्ति, विद्यादि की अधिष्ठातृ देवता के रूप में जिस प्रकार लक्ष्मी, दुर्गा, सरस्वती आदि प्रसिद्ध हैं उसी प्रकार वैदिक देवता भी विविध शक्तियों की अधिष्ठात्री हैं।

उपनिषद् काल में स्त्रियों का सम्मान और अधिक किया जाता था। एक वृत्तान्त के अनुसार राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य ऋषि के साथ शास्त्रार्थ करने के लिए उनकी पत्नियाँ मैत्रेयी तथा गार्गी भी

विद्यमान थीं। श्रुत्यनुगामिनी स्मृतियों में अङ्गुलिगण्य ग्रन्थ मनुस्मृति में– 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' कहकर स्त्रियों को पर्याप्त सम्मान प्रदान करने का निरूपण है। पुराणों में स्त्री को शक्ति–स्वरूपा माना गया है। असुर वध के लिए अनेक देवताओं की शक्ति का समुच्चय देहधारिणी देवी के रूप में प्रकट होता है।

सम्प्रति हमारा प्रतिपाद्य विषय है स्त्रियों के प्रति होने वाली हिंसा अर्थात् उत्पीड़न। हिंसा शब्द जो हिंस् + अ + टाप् (आ) के योग से बना है, का अभिप्राय है– हिंसनम् (घातः), मारणम्, 'चौर्यादि कर्म च' अर्थात् मारण (वध) के अतिरिक्त प्रमादवश' किया गया प्राणि–अहित भी हिंसा ही है।[iii] मनुस्मृतिकार ने तो 'न ब्रूयात्सत्यमपियम्' का उद्घोष करते हुए कटु सत्य बोलकर हिंसा करने वाले को भी सावधान किया है क्योंकि कटु सत्य से दूसरे पक्ष का मानसिक उत्पीड़न होता है।

वेदों के अनुसार रामायण और महाभारत प्रमुख इतिहास महाकाव्य जनमानस को सरस बनाते रहे हैं। एतदुत्तरवर्ती समग्र ग्रन्थों एवं काव्यादि के ये प्रेरणा स्रोत रहे हैं। ये दोनों महाकाव्य कथानक के स्रोत तो हैं ही धर्म और संस्कृति के स्रोत भी रहे हैं। इतिहास साक्षी है कि राम और रावण तथा कौरव और पाण्डवों के मध्य हुए भारत के दो महायुद्ध नारी के अपमान रूपी उत्पीड़न के ही भयंकर दुष्परिणाम थे।

वेदों के अतिरिक्त संस्कृत साहित्य का प्रथम महाकाव्य 'श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण' है जो तपः पूत परम दार्शनिक आद्य महाकवि वाल्मीकि की दिव्य रचना है। यह महाकाव्य समस्त गुणों का आकर राजनीति, अर्थनीति एवं धर्मनीति के सिद्धान्तों से परिपूर्ण है। ऐसे दिव्य महाकाव्य में खलनायकवत् आचरण करने वाला रावण मातृवत् पूज्या स्त्रियों पर बल–प्रयोग करके अपनी आसुरी प्रवृत्ति का परिचय देता है। असाधारण प्रज्ञावान् के रूप में लब्धख्याति बृहस्पति के अमित तेजस्वी पुत्र कुशध्वज की (विष्णु–भगवान् को पति के रूप में प्राप्त करने हेतु तपोरता) कन्या वेदवती के प्रति आसक्त हुआ रावण उससे प्रणय–प्रस्ताव करता है। असफल मनोरथ होने पर क्रोधवश वेदवती के केश खींचकर उसे अपमानित करता है।[iv] तिरस्कृता वेदवती रावण द्वारा स्पृष्ट केशों का कर्तन करके स्वयं भी प्रज्वलित अग्नि में प्रविष्ट हो जाती है।[v] तत्पश्चात् पूर्वजन्म में कृत तपोबल से वही कन्या कमल से प्रकट होती है। पुनरपि दुष्ट राक्षस उस कन्या को वहाँ से प्राप्त करके अपने घर ले जाता है तथा मन्त्रियों द्वारा निर्दिष्ट लक्षणों से उसे अपने विनाश का हेतु मानते हुए उसे समुद्र में फेंक दिया।[vi] वह कन्या भूमि को प्राप्त होकर राजा जनक के यज्ञमण्डप के मध्यवर्ती भूभाग में जा पहुँची वहाँ राजा के हल के मुखभाग से उस भूभाग के जोते जाने पर वह सती–साध्वी कन्या फिर प्रकट हो गई। सीता (हल जोतने से भूमि पर बनी हुई रेखा) से उत्पन्न होने के कारण मनुष्यों ने उसी कन्या को सीता नाम से अभिहित किया।[अपप] रावण मातृवत् पूज्या सीता का केशसहित मस्तक स्पृष्ट करके रथ पर बिठाकर ले जाता है। स्व–पति श्रीराम की अनन्य साधिका सती सीता आहत हुई नागिन की तरह छटपटाती है।[viii]

अपहृता सीता को लेजाकर रावण अशोक वाटिका में भयावह राक्षसियों के मध्य रखता है तथा क्रोध से रक्ताभ दृष्टि से विदेहनन्दिनी की ओर फुफकारते हुए सर्प के समान लम्बी साँसे खींचते हुए कहता है– जैसे सूर्यदेव अपने तेज से प्रातःकालीन सन्ध्या के अन्धकार को नष्ट कर देता है उसी प्रकार आज मैं तेरा विनाश किए देता हूँ।[ix] इस प्रकार कठोर तथा भयावह व्यवहार से काँपती हुई भगवती सीता का मानसिक उत्पीड़न करता हुआ काममोहित रावण अपने भवन में प्रविष्ट हो गया।[x] रावण के दुर्व्यवहार से खिन्नमना सीता को राक्षसियाँ रावण का भार्यात्व स्वीकार करने के लिए बाध्य करती हैं। सीता द्वारा ऐसा न किए जाने पर वे भिन्न–भिन्न प्रकार के भय दिखाती हैं। 'विकटा' नाम वाली एक राक्षसी मुक्का तानकर डाँटती है।

प्रचण्डदर्शना चण्डोदरी नाम वाली राक्षसी क्रूर दृष्टि से देखकर त्रिशूल घुमाते हुए कहती है– कि जब से महाराज रावण इसका अपहरण करके लाए हैं तब से मेरे हृदय में इसके जिगर, तिल्ली, विशाल वक्षस्थल तथा इसके अन्य अंगों के साथ सिर खाने की इच्छा जाग्रत हुई है।[xi] आजानुमुखी नामक राक्षसी कहती है, आओ इसको काटकर बहुत–से टुकड़े कर लेते हैं तथा बराबर–बराबर मात्रा में बाँट लेते हैं।[xii]

राक्षसियों की कठोरतापूर्ण एवं भयावह धमकियों से आतंकित होकर जनकनन्दिनी अश्रु प्रवाहित करती हुई कहती है कि– ''हे राक्षसियों, भले ही तुम सब मिलकर मुझे खा जाओ किन्तु मैं तुम्हारा और तुम्हारे स्वामी का प्रस्ताव स्वीकार नहीं करूँगी।''[गपपप] इसके पश्चात् भयत्रस्ता तथा अधीर मना सीता प्रचण्ड वायु के झोंके से पतित होने वाले कदली वृक्ष की भाँति संज्ञाशून्य होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी तथा विलाप करने लगी– हा राम! हा लक्ष्मण! हा श्वश्रू कौशल्ये! हा आर्ये सुमित्रे! पण्डितों ने ठीक ही कहा है कि किसी भी पुरुष या स्त्री की मृत्यु समय आने से पूर्व नहीं होती। मैं ऐसी दशा में जीवित भी नहीं रह सकती। आत्महत्या हेतु साधन दुर्लभ होने पर सीता जी ने अपनी चोटी पकड़कर निश्चय किया कि ''मैं इस चोटी से फाँसी लगाकर यमलोक में पहुँच जाऊँगी।''[xiv]

वाल्मीकि रामायण में नारी उत्पीड़न के अनेक स्थलों में यह भी उल्लेखनीय है– वन–वासहेतु गमन करते समय माता कौशल्या द्वारा पतिव्रत धर्म के पालन का उपदेश दिए जाने पर सीता जी द्वारा उनको इस प्रकार आश्वस्त किया जाता है– 'आर्ये! आप मेरे लिए जो कुछ उपदेश दे रही हैं, मैं उसका पूर्णरूपेण पालन करूँगी। जैसे प्रभा चन्द्रमा से दूर नहीं हो सकती तद्वदेव मैं पतिव्रत धर्म से विचलित नहीं हो सकती।'[गअ] उन्हीं भगवती सीता जो पतिव्रत धर्म परायणा (राम की अनन्य साधिका) थीं की, भगवान् राम के द्वारा रावण की नगरी लंकापुरी से लौटने पर अग्नि परीक्षा ली जाती है। श्री राम कहते हैं कि मैंने रावण के साथ युद्ध में जो परिश्रम किया है तथा मित्रों के पराक्रम से इसमें विजय पाई है, वह सदाचार की रक्षा तथा सब ओर फैले हुए अपवाद का निराकरण करने के लिए तथा अपने वंश पर लगे हुए कलंक का परिमार्जन करने के लिए किया है तुम्हें पाने के लिए नहीं। रावण की नगरी में रहने के कारण सन्दिग्धचरित्रा तुम मुझे उसी प्रकार अप्रिय लग रही हो जैसे नेत्ररोग ग्रस्त व्यक्ति को दीपक का प्रकाश नहीं सुहाता। इसलिए मेरी अनुमति से तुम स्वेच्छा से कहीं भी जा सकती हो। क्योंकि कोई भी कुलीन पुरुष दूसरे के घर में इतने लम्बे समय तक रहकर सौहार्द स्थापित करने वाली स्त्री को मन से भी ग्रहण नहीं कर सकता। रावण तुम्हें अपनी गोद में उठाकर ले गया था और तुम्हारी ओर दूषित दृष्टि से देख चुका है। अब मेरी तुम्हारे प्रति ममता या आसक्ति नहीं है अतः तुम स्वेच्छा से कहीं भी जा सकती हो। तुम शत्रुघ्न, सुग्रीव, भरत अथवा लक्ष्मण किसी के भी संरक्षण में रह सकती हो क्योंकि दिव्य गुण रूप सम्पन्ना तुमसे रावण दूर नहीं रह पाया होगा।[गअप] राम के ऐसे कठोर वचनों से सीता उसी प्रकार आहत हुई जिस प्रकार हाथी की सूँड से लता आहत हो जाती है।[गअपप] श्रीराम के अश्रुतपूर्व कठोर वाग्वाणों से पीड़ित होकर बोली 'हे महाबाहो निम्नश्रेणी की स्त्रियों से कहे जाने वाले योग्य वचनों के द्वारा आप मुझ पर सन्देह न करें।'[xviii] मेरे रावण से शरीर के स्पर्श होने के विषय में मेरी पराधीनता थी किन्तु मेरे अधीनस्थ मेरा चित्त सदैव आपमें आसक्त रहता है।

अपनी शुद्धता प्रमाणित करने के लिए सीता जलती हुई अग्नि में प्रविष्ट हो जाती हैं। इस दारुण दृश्य को देखकर दैत्य एवं दानव स्त्री एवं पुरुष सभी का आर्तनाद चारों ओर गूँज उठा।[xix] यह स्त्री की विडम्बना थी तथा असह्य मानसिक उत्पीडन था जिसे सीता जी ने सहन किया। केवल इतना ही नहीं पुनः गुप्तचरों के माध्यम से सीता के विषय में होने वाले लोकापवाद के कारण कठोरगर्भा सीता को परित्यक्त करने का निश्चय करके लक्ष्मण को आदिष्ट किया कि भगवती सीता को गंगातट पर छोड़ आओ। लक्ष्मण जब गंगातट पर

जाकर सीता को राम का आदेश सुनाते हैं तब भी जनकनन्दिनी राम का दोष नहीं ढूँढती अपितु शोकसंतप्ता होकर कहती हैं – 'हे लक्ष्मण विधाता ने मेरे शरीर को केवल दुःख भोगने के लिए ही रचा है इसीलिए आज सारे दुःखों का समूह मूर्तिमान होकर मुझे दर्शन दे रहा है।'[xx] मैंने पूर्व जन्म में ऐसा कौन–सा पाप किया था जो शुद्धचरित्रा होते हुए भी महाराज ने मुझे त्याग दिया है।[xxi]

नारी उत्पीड़न की पराकाष्ठा तो यहाँ दृष्टव्य है– श्री राम के अश्वमेद्य यज्ञ में लव और कुश द्वारा रामायण सुनाई जाती है। लव और कुश से प्रभावित होकर श्री राम प्रयत्नपूर्वक यह ज्ञात कर लेते हैं कि ये दोनों सीता जी के पुत्र हैं। परिणामतः श्री राम वाल्मीकि ऋषि के पास दूतों के माध्यम से यह सन्देश प्रेषित करते हैं। आप सीता को यहाँ लाकर जनसमुदाय के मध्य आकर अपनी शुद्धता प्रमाणित करे।[xxii] श्री राम ने पूज्य–ऋषियों उनके शिष्यों तथा वृहद् जनसमुदाय को सीता द्वारा शपथ ग्रहण कर शुद्धता प्रमाणित करने का दृश्य देखने के लिए आमन्त्रित किया तथा नाना देशों से पधारे हुए ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सहस्रों की संख्या में वहाँ उपस्थित हुए जिनमें ज्ञाननिष्ठ, कर्मनिष्ठ और योगनिष्ठ सभी तरह के लोग थे। जनसम्मर्द के समक्ष वाल्मीकि जी ने सीता की शुद्धता को प्रमाणित करते हुए कि मैंने दिव्य–दृष्टि से सीता के शुद्ध–चरित्र को जान लिया। श्री राम ने भी उद्घोषित किया कि सीता जी के चरित्र के विषय में पूर्णतया आश्वस्त होते हुए भी लोकापवाद के कारण मुझे सीता का परित्याग करना पड़ा। तदनन्तर तपस्विनी सीता हाथ जोड़े हुए अधोमुखी होती हुई बोली– ''मैं श्री रघुनाथ जी के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष के विषय में मन से चिन्तन भी नहीं करती, यदि यह सत्य है तो भगवती पृथ्वी अपनी गोद में मुझे स्थान दें''[xxiii] तभी भूतल से दिव्य रूप से नागों द्वारा धृत सिंहासनासीना पृथ्वी की अधिष्ठात्री देवी प्रकट होकर भगवती सीता को अपनी क्रोड में लेकर रसातल में प्रविष्ट हो गईं।[xxiv]

रावण द्वारा स्त्री उत्पीड़न का एक अन्य प्रकरण रामायण में उपलब्ध होता है। देवलोक पर आक्रमण हेतु गमन करते समय कैलाश पर्वत पर कुबेर के पुत्र नलकूबर की प्रेयसी को एकान्त में पाकर रावण के द्वारा उस पर बल प्रयोग किया जाता है।[गगअ] परिणामतः नलकूबर द्वारा दिया गया रावण को भीषण शाप भी भोगना पड़ता है।

महर्षि वेदव्यास प्रणीत महाभारत भारतीय आर्य संस्कृति तथा भारतीय सनातन धर्म का विशाल ग्रन्थ तथा अमूल्य रंत्नों का अपार भण्डार है। महाभारत को संग्रह ग्रन्थ भी कहा जाता है। यह महाकाव्य यत्नपूर्वक संवारा हुआ उद्यान नहीं है जिसको पुष्पादि सौन्दर्यार्थ बाह्य सहायता अपेक्षित हो अपितु ऐसे उद्यानों का जनक है जहाँ अनेक प्रकारीय पुष्प अपनी विकीर्यमाण गन्ध से अपने चारों ओर के वातावरण को सौरभान्वित एवं मत्त करते रहते हैं। संक्षेप में धर्म–अर्थ–काम और मोक्ष के सम्बन्ध में जो बात इस ग्रन्थ में है, वही अन्यत्र भी है, जो इसमें नहीं है, वह कहीं भी नहीं है[गगअप] इसीलिए यह सर्वप्रधान काव्य सर्वदर्शनों का सार स्मृति–इतिहास, चरित्र–चित्रण का आकर एवं 'पञ्चम वेद' कहा जाता है तथा "महत्त्वाद् भारवत्त्वाच्च महाभारतमुच्यते' अर्थात् महत् तथा भारतवान् होने के कारण महाभारत कहा जाता है। किन्तु नारी की स्थिति महाभारत काल में आते–आते संकटापन्न हो गई थी। इस युग में वह घोर अपमान की पात्र बन गई थी। नैतिकता का नितान्त ह्रास हो गया था। पुरुष स्वयं को अपनी पत्नी से उच्चतर एवं अधिकार सम्पन्न समझने लगा था।

नागराज वासुकि की बहन का विवाह जरत्कारु मुनि के साथ इस शर्त पर होता है कि नागकन्या कदापि ऐसा कार्य नहीं करेगी जो उसके पति को अप्रिय हो अन्यथा मुनि उसका साथ छोड़ देंगे।[xxvii] यशस्विनी नागकन्या दुःखद स्वभाव वाले पति की उसी शर्त के अनुसार सेवारत हो गई किन्तु

उसके दुर्भाग्य से एक दिन मुनि उसकी गोद में सिर रखकर निद्रामग्न थे। उसी अवस्था में सूर्य अस्ताचल पर पहुँच गया। पति के धर्मलोप के भय से महर्षि से मधुर वाणी में कहा– महाभाग! उठिए सूर्यदेव अस्ताचल को जा रहे हैं। वह मुहूर्त धर्म का साधन होने के कारण अत्यन्त रमणीय जान पड़ता है। नागकन्या द्वारा जगाए जाने पर काँपते हुए होठों वाले महर्षि बोले– नागकन्ये! तूने मेरा अपमान किया है। इसलिए अब मैं तेरे पास नहीं रहूँगा। नागकन्या ने अनुनय–विनयपूर्वक कहा कि मुनिवर मैंने अपमान करने के लिए आपको नहीं जगाया अपितु आपके धर्म का लोप न हो ऐसा ध्यान में रखते हुए मैंने यह कार्य किया है। किन्तु क्रोधावेश में महर्षि जरत्कारु ने अपनी पत्नी नागकन्या को त्याग देने की इच्छा से कहा– नागकन्ये! "मैने कभी झूठी बात मुँह– से नहीं निकाली है, अतः अवश्य जाऊँगा।''[xxviii] नागकन्या शोकमग्न होकर कहती है द्विजश्रेष्ठ मुझ निरपराध अबला का परित्याग न करें मैं सदैव अपने पत्नी–धर्म में स्थित रही हूँ।[xxix] किन्तु महर्षि जरत्कारु उसके अनुनय विनय पर ध्यान न देकर उसका परित्याग करके कठोर तप के लिए वन में चले गए।

महाभारत काल में नैतिकता का नितान्त ह्रास दृष्टव्य है– प्रथमतः तो युधिष्ठिर द्यूत–क्रीड़ा में द्रौपदी को दाँव पर लगाकर अनभिज्ञतावश नारी उत्पीड़न की परम्परा का प्रतिपादन करते हैं।[xxx] इसके पश्चात् तो नारी–हिंसा की पराकाष्ठा तब हो जाती है जब धृतराष्ट्र पुत्र दुःशासन द्वारा दुर्योधन के आदेश से केश पकड़कर बलात् राजसंकुल सभा में लाई गई याज्ञसेनी बारम्बार अपनी लज्जा के त्राण के लिए सभी वीरों से प्रार्थना कर रही थी किन्तु किसी भी वीर का यह साहस नहीं हुआ कि दुःशासन एवं दुर्योधन के अत्याचार को रोक सके।[xxxi] दुःशासन द्रौपदी के कृष्णवर्ण वाले केशों को पकड़कर घसीटता हुआ सभा की ओर ले जाता है। आकृष्यमाणा नमिताङ्गी याज्ञसेनी भगवान् कृष्ण को अपनी रक्षा के लिए पुकारती है।[xxxii]

वह दुःशासन से कहती है कि मैं एकवस्त्रा हूँ ऐसी अवस्था में पितृतुल्य शास्त्रज्ञ गुरुजनों के मध्य में स्थित नहीं होना चाहती।[xxxiii] अरे दुष्ट क्रूरकर्मा दुराचारी दुःशासन मुझे खींचकर विवस्त्रा मत कर अन्यथा पाण्डव तुझे क्षमा नहीं करेंगे।[xxxiv] नराधम दुःशासन द्रौपदी की प्रार्थना पर विचार न करता हुआ द्रौपदी को घसीटता हुआ कहता है– भले ही तू एकवस्त्रा हो अथवा विवस्त्रा हो अब तू द्यूत–क्रीडा में विजित होने के कारण हमारी दासी है।[xxxv]

दुःशासन द्वारा आकृष्यमाणा द्रौपदी सहायतार्थ सब ओर दृष्टिपात करती है लेकिन किसी को भी दुर्योधन के विरुद्ध कुकर्म की निन्दा के लिए उद्यत नहीं पाती तब भरतवंश के नरेशों को धिक्कारती हुई कहती है कि इन सब मूकद्रष्टाओं का क्षात्रधर्म तथा सदाचार सब लुप्त हो गया है।[गगगअप] ऐसा प्रतीत होता है कि द्रोणाचार्य पितामह भीष्म, महात्मा विदुर तथा धृतराष्ट्र में अब कोई शक्ति नहीं रह गई है। वह करुण विलाप करती हुई अपने पतियों की ओर दृष्टिपात करती है।[xxxvii]

कर्ण अपने वाग्बाणों से द्रौपदी को आहत करता हुआ कहता है कि देवताओं ने स्त्री के लिए एक पति का विधान किया है यह द्रौपदी अनेक पतियों के अधीन है अतः यह निश्चय ही वेश्या है इसलिए इसको एकवस्त्र अथवा विवस्त्रावस्था में भी यहाँ लाया जाना अनुचित नहीं है।[xxxviii] वह यहाँ तक इंगित करता है कि द्रौपदी सहित पाण्डवों के वस्त्र उतार लो तब दुःशासन ने भरी सभा में द्रौपदी का वस्त्र बलात् खींचना प्रारम्भ कर दिया। द्रौपदी ने मन ही मन भगवान् कृष्ण का इस रूप में स्मरण किया– हे संकटनाशन जनार्दन! मैं कौरवरूपी समुद्र में डूबी जा रही हूँ, मेरा उद्धार कीजिए।[गगगपग] इस प्रकार करुण क्रन्दन करती

हुई दुःशासन के द्वारा खींची जाती हुई द्रौपदी पृथ्वी पर गिर पड़ी और उस सभा में जिस दुरुवस्था में वह पड़ी थी उसके योग्य कदापि नहीं थी।[xl]

वनवास की अवधि में पर्णशाला में स्थिति द्रौपदी को एकाकिनी पाकर सौवीर नरेश दुःशाला का पति जयद्रथ उसके रूप सौन्दर्य से आकृष्ट होकर अपहरण कर लेता है[xli] जिससे द्रौपदी को महत् कष्ट होता है। एक वर्ष की अज्ञातवास की अवधि में मत्स्य देश की राजधानी में गुप्तरूप से निवास करने वाले पाण्डवों को राजा विराट की सेवा करते हुए एक वर्ष पूरा होने में कुछ ही समय शेष रहने पर विराट का सेनापति महाबली कीचक द्रुपद कुमारी को देखकर उसके प्रति कामासक्त हो गया। उसने द्रौपदी का दुपट्टा खींचकर उसे अपमानित किया जिससे वह बहुत आहत होती है।[xlii]

उपर्युक्त विवरण से यह तो सुनिश्चित हुआ कि रामायण तथा महाभारत काल में कतिपय नारियों का उत्पीड़न हुआ था किन्तु साथ ही हमें यह भी विस्मृत नहीं करना चाहिए कि इन दोनों युगों में संस्कृति के संरक्षक सामर्थ्यवान् महापुरुषों के द्वारा नारी का उत्पीड़न करने वाले असुरों तथा दुराचारियों को दण्डित भी किया गया तथा नारी सम्मान की रक्षा हुई। आज भी विश्ववरणीय भारतीय संस्कृति के विटप को पल्लव, पुष्प और फलों से समृद्ध बनाए रखने के लिए नारी सम्मान की रक्षा करनी चाहिए जिससे नारी की स्थिति दृढ़प्रतिष्ठित हो सके।

सन्दर्भ–सूची

i. हलायुधकोश, पृष्ठ, 388ण

ii. अमरकोश, पृष्ठ, 203/2ण

iii. हलायुधकोश, पृष्ठ, 742ण

iv. एवमुक्तस्तया तत्र वेदवत्या निशाचरः मूर्धजेषु तदा कन्यां कराग्रेण परामृशत्।। श्रीमद्वाल्मीकि–प्रणीत–रामायण, उत्तर काण्ड, 17/27ण

v. ततो वेदवती क्रुद्धा केशान् हस्तेन साच्छिनत् ण ण ण ण ण। एवमुक्तवा प्रविष्टा सा ज्वलितं जातवेदसम् वही, 17/28–34ण

vi. पुनरेव समुद्भूता पद्मे पद्मसमप्रभा ण ण ण ण ण एतच्छुत्वार्णवे राम तां प्रचिक्षेप रावणः।। वही, 17/35–38ण

vii. सा चैव क्षितिमासाद्य यज्ञायतनमध्यगा। राज्ञो हलमुखोत्कृष्टा पुनरप्युत्थिता सती।। ण ण ण ण ण सीतोत्पन्ना तु सीतेति मानुषैःपुनरुच्यते।। वही, 17/39–44ण

viii. वामेन सीतां पद्माक्षीं मूर्धजेषु करेण सः। ऊर्वोस्तु दक्षिणेनैव परिजग्राह पाणिना। ततस्तां परुषैर्बाक्यैरभितर्ज्य महास्वनः। अंकेनादाय वैदेहीं रथमारोपयत् तदा।। (अरण्य काण्ड, 49/17–20ण)

ix. अनयेनाभिसम्पन्नमर्थ हीनमनुव्रते। नाशयाम्यहमद्य त्वां सूर्यः संध्यामिवौजसा।। वा0 रा0, सुन्दर काण्ड, 22/31ण

[x]. स मैथिलीं धर्मपरामवस्थितां प्रवेपमानां परिभर्त्स्य रावणः। विहाय सीतां मदनेन मोहितः, स्वमेव वेश्म प्रविवेश–रावण। वही, 22/46

[xi]. अन्या तु विकटा नाम लम्बमानपयोधरा। अब्रवीत् कुपिता सीतां मुष्टिमुद्यम्य तर्जती ततश्चण्डोदरी नाम राक्षसी क्रूरदर्शना, भ्रामयन्ती महच्छूलमिदं वचनमब्रीवत्। इमां हरिणशावक्षीं त्रासोत्कम्पपयोधराम् रावणेन ह्रतां दृष्ट्वा दौर्ह्रदो मे महानयम्। यकृत प्लीहं महत् क्रोडं ह्रदयं च सबन्धनम्।। गात्राण्यपितथा शीर्षं श्वादेयमिति मे मतिः।
वही, 24/28–40ण

[xii]. ततस्त प्रघसा नाम वाक्यमब्रवीत् विशस्येमां ततःसर्वान् समान् कुरुत पिण्डकान्।। वही, 24/43, 44

[xiii]. कामं खादत मां सर्वा न करिष्यामि वो वचः। वही, 25/3

[xiv]. साहं त्यक्ता प्रियेणैव रामेण विदितात्मना। प्राणांस्त्यक्ष्यामि पापस्य रावणस्य गता वशम्।। वही 26/49ण

[xv]. न मामसज्जनेनार्या समानयितुमर्हति। धर्माद् विचलितुं नाहमलं चन्द्रादिव प्रभा।। वही– अयोध्या काण्ड, 39/28ण

[xvi]. तदद्य व्याह्रतं भद्रे मयैतत् कृतबुद्धिना, लक्ष्मणे वाथ भरते कुरु बुद्धिं यथासुखम्।। शत्रुघ्ने वाथ सुग्रीवे राक्षसे वा–विभीषणे निवेशय मनः सीते यथा वा सुखमात्मनः।। न हि त्वां रावणो दृष्ट्वा दिव्यरूपां मनोरमाम् मर्षयेत् चिरं सीते स्वगृहे पर्यवस्थिताम्। वही, युद्धकाण्ड 115/22–24ण

[xvii]. ततः प्रियार्ह श्रवणा तदप्रियं प्रियादुपश्रुत्य चिरस्य मानिनी। मुमोच बाष्पं रुदती तदा भृशं, गजेन्द्रहस्ताभिहतेव वल्लरी।। वही, 115/25ण

[xviii]. सा तदाश्रुतपूर्वं हि जने महति मैथिली रूक्षं श्राबयसे वीर प्राकृतः प्राकृतामिव। वही– युद्धकाण्ड, 116/2–5ण

[xix]. एवमुक्त्वा तु वैदेही परिक्रम्य हुताशनम्, विवेश ज्वलनं दीप्तं निःशङ्केनान्तरात्मना।। प्रचुक्रुशुः स्त्रियः सर्वास्तां दृष्ट्वा द्रव्यवाहने, पतन्तीं संस्कृतां मन्त्रैर्वसोर्धारामिवाध्वरे तस्यामग्निं विशन्त्यां तु हाहेति विपुलः स्वनः रक्षसां वानराणां च सम्बभूवाद्भुतोपमः।। वही, 29–36ण

[xx]. मामिकेयं तनुर्नूनं सृष्टा दुःखाय लक्ष्मण। धात्रा यस्यास्तथा मेऽद्य दुःखमूर्ति प्रदृश्यते।। उत्तरकाण्ड, 48/3ण

[xxi]. किं नु पापं कृतं पूर्वं को वा दारैर्वियोजितः। याहं शुद्धसमाचारा त्यक्ता नृपतिना सती।। वही, 28/4ण

[xxii]. यदि शुद्धसमाचारा यदि वा वीतकल्मषा करोत्विहात्मनः शुद्धिमनुमान्य महामुनिम्।। उत्तरकाण्ड, 95/4ण

[xxiii]. यथाहं राघवादन्यं मनसापि न चिन्तये तथा मे माधवी देवि विवरं दातुमर्हति। वही, 97/14–16ण

[xxiv]. तथा शपन्त्यां वेदेह्यां प्रादुरासीत् तदद्भुतम् ण ण ण ण ण तामासनगतां दृष्ट्वा प्रविशन्तीं रसातलं पुष्पवृष्टिरवच्छिन्ना दिव्या सीतामवाकिरत्।। वही, 97/17–20ण

[xxv]. एवमुक्त्वा स तां रक्षो निवेश्य च शिलातले कामभोगाभिसंरक्तो मैथुनायोपचक्रमे।। वाल्मीकि रामायण, उत्तरकाण्ड, 26/40ण

[xxvi]. धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ। यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।। वही आदिपर्व, 62/53ण

[xxvii]. त्यजेयं विप्रिये च त्वां कृते वासं च ते गृहे। एतद् गृहाण वचनं मया यत् समुदीरितम्।। महाभारत, आदि पर्व, 47/9ण

[xxviii]. ऋषिः कोपसमाविष्टस्त्यक्तकामो भुजङ्गमाम्। न मे वागनृतं प्राह गमिष्येऽहं भुजङ्गमे।। वही, श्लोक–30ण

[xxix]. इत्युक्त्वा सानवद्याङ्गी प्रत्युवाच मुनिं तदा। जरत्कारुं जरुत्कारुश्चिन्ता शोकरायणा।। वही, 33ण

[xxx]. तयैवंविधया राजन् पाञ्चाल्याहं सुमध्यपा ग्लहं दीव्यामि चार्वङ्ग्या द्रौपद्या हन्त सौबल। एवमुक्ते तु वचने ण ण ण ण ण निःश्वसन्त इवोरगाः।। वही, सभापर्व, 65/39–42ण

[xxxi]. ततो जवेनाभिससार रोषाद् दुःशासनस्तामाभिगर्जमानः दीर्घेषु नीलेष्वथ चोर्मिमत्सु जग्राह केशेषु नरेन्द्रपत्नीम्।। वही, 67/29ण

[xxxii]. ततोऽब्रवीत् तां प्रसभं निगृह्य केशेषु कृष्णेषु तदा स कृष्णाम्। कृष्णं च जिष्णुं च हरिं नरं च त्राणाय विक्रोशति याज्ञसेनी। वही, 33ण

[xxxiii]. इमे सभायामुपनीतिशास्त्राः क्रियावन्तः सर्व एवेन्द्रकल्पाः। गुरुस्थाना गुरवश्चैव सर्वे तेषामग्रे नोत्सहे स्थातुमेवम्। वही, 36ण

[xxxiv]. नृशंसकमस्त्वमनार्यवृत्त मा मां विवस्त्रां कुरु मा विकर्षीः। न मर्षयेयुस्तव राजपुत्राः सेन्द्राश्च देवा यदि ते सहायाः।। वही, 37ण

[xxxv]. रजस्वला वा भव याज्ञसेनि एकाम्बरा वाप्यथवा विवस्त्रा। द्यूते जिता चासि कृतासि दासी दासीषु वासश्च यथोपजोषम्।। वही, 34ण

[xxxvi]. धिगस्तु नष्टः खलु भारतानां धर्मस्तथा क्षत्रविदां च वृत्तम्। यत्र ह्यतीतां कुरुधर्मवेलां प्रेक्षन्ति सर्वे कुरवः सभायाम्।। वही, 40ण

[xxxvii]. द्रोणस्य भीष्मस्य च नास्ति सत्त्वं क्षत्तुस्तथैवास्य महात्मनोऽपि। ण ण ण ण ण सा पाण्डवान् कोपपरीतदेहान् संदीपयामास कटाक्षपातैः।। वही, 41–42ण

[xxxviii]. एको भर्ता स्त्रिया देवैर्विहितः कुरुनन्दन।
इयं त्वनेकवशगा बन्धकीति विनिश्चिता।
अस्या सभामानयनं न चित्रमिति।
मे मतिः एकाम्बरधरत्वं वाप्यथ वापि विवस्त्रता।। वही, 68/35–36ण

[xxxix]. गोविन्द द्वारकावासिन् कृष्ण गोपीजनप्रिय कौरवैः परिभूतां मां किं न जानासि केशव। हे नाथ हे रमानाथ ब्रजनाथार्तिनाशन कौरवार्णवमग्नां मामुद्धरस्व जनार्दन।। वही, 41, 42ण

[xl]. सा तेन च समाधूता दुःखेन च ततपस्विनी। पतिता विललापेदं सभायामतथोचिता। वही, 69/3ण

[xli]. प्रमृह्यमाणा तु महाजवेन मुहुर्विनिःश्वस्य च राजपुत्री। सा कृष्यमाणा रथमारूरोह धौम्यस्य पादावाभिवाद्य कृष्णा।। वही वनपर्व, 268/25ण

[xlii]. स तामभिप्रेक्ष्य विशालनेत्रां जिघृक्षमाणः परिभर्त्सयन्तीम्। जग्राह तामुत्तरवस्त्रदेशे स कीचकस्तां सहसाऽऽक्षिपन्तीम्। वही, कीचकवधपर्व, 16/7ण